भारत में समावेशी शिक्षा की रणनीतियां

डा0 कल्पना यादव,

सह आचार्य,

बी.एड. विभाग, खुन खुन जी गर्ल्स पी.जी.कालेज, चौक, लखनऊ

समावेशी शिक्षा वह है जिसमें सामान्य विद्यालय में बाधित व सामान्य बालकों को एक साथ शिक्षा प्रदान की जाती है। विद्यालयों में विभिन्न प्रकार के बच्चे पढ़ने के लिये आते हैं। जो बालक शारीरिक या मानसिक रूप से अपंग होते हैं वे सामान्य बच्चों की अपेक्षा कुछ कम सीख पाते हैं। वर्तमान समय में आवश्यकता इस बात की है कि केवल प्रतिभावान बालकों की तरफ ही ध्यान न दिया जाये बल्कि जो बालक सामान्य से कम है उनकी तरफ भी उचित ध्यान दिया जाये ताकि वे भी देश की मुख्य धारा में आकर अपनी योग्यताओं से देश की उन्नति में योगदान कर सके।

असमर्थ बालकों के लिये विशेष विद्यालयों की स्थापना की शुरूआत 18वीं शताब्दी के मध्य में हुई थी, लेकिन जब से मनोविज्ञान ने शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश किया तो यह महसूस किया जाने लगा कि इन बालकों को अलग नहीं करना चाहिये क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक व शिक्षा की दृष्टि से उचित नहीं है।

समावेशी शिक्षा का प्रत्यय अभी नया–नया है। अमेरिका में 1975 ई0 में अमेरिकन कांग्रेस के 'प्रत्येक अक्षम बच्चे को शिक्षा' का एक कानून पास किया था। इस कानून का मुख्य उद्देश्य अक्षम बालकों को देश की मुख्य धारा से (main streaming) से जोड़ना था। मुख्य धारा से अभिप्राय है कि शारीरिक तथा मानसिक दोष वाले बालक सामान्य बालकों के साथ पढ़ेंगे तथा उनको विशेष प्रकार की सहायता दी जायेगी। भारत में भी 'समावेशी शिक्षा' अमेरिका के 'मुख्य–धारा आंदोलन का ही परिणाम है। इस आंदोलन का मुख्य उद्देश्य विकलांगों को मुख्य धारा में लाना है। इस बात पर अधिक जोर दिया जा रहा है क्रम अपंग बालकों को विशेष शिक्षा की नहीं अपितु समावेशी व मुख्य धारा की आवश्यकता है।

हमारे भारतीय संविधान में सभी नागरिकों के लिए सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक, वैयक्तिक स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त है जिसमें शिक्षा भी समाहित है। लोकतांत्रिक समाज की स्थापना के लिये हमारे संवैधानिक मूल्य स्पष्ट दिशानिर्देशन प्रदान करते हैं और इस प्रकार एक समावेशी समाज की स्थापना का आदर्श प्रस्तुत करते है। इस परिप्रेक्ष्य में बच्चे को सामाजिक, जातिगत, आर्थिक, वर्गीय, लैंगिक, शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से भिन्न देखे जाने के बजाय एक स्वतंत्र अधिगमकर्ता के रूप में देखे जाने की आवश्यकता है जिससे लोकतांत्रिक समाज में बच्च के समुचित समावेशन हेतु वातावरण का सृजन किया जा सके।

भारत में समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये समावेशित विद्यालयी वातावरण बनाने की आवश्यकता है जिसमें सभी को समान रूप से शिक्षा मिले ताकि सब पढ़े और सब बढ़े। पाठ्यक्रम का निर्माण सभी विद्यार्थियों को ध्यान में रखते हुये किया जाए, जो उनकी मनःस्थिति, रूचियों, आकांक्षाओं तथा बुद्धि क्षमता के अनुरूप हो जिससे पठन–पाठन में विशिष्ट बच्चों को असुविधा न हो।

घर परिवार तथा पास पड़ोस को समावेशी शिक्षा की पृष्ठिभूमि की पहली पाठशाला

माना जा सकता है क्योंकि बालक की प्रारंभिक शिक्षा यहीं से आरम्भ होती है। एक ही माता–पिता की अनेक संतान है तो उन सबकी बुद्धि भी अलग–अलग होगी जिसके कारण उनके सीखने की क्षमता भी अलग–अलग होगी जो कि उनकी विशिष्ट मानसिक क्षमता का परिचायक है। इस तरह माता–पिता तथा घर के सभी सदस्यों के साथ–साथ समाज के लोगों की यह नैतिक जिम्मेदारी होनी चाहिये कि वह अपने बच्चों को समावेशन की प्रक्रिया के तहत एक ऐसा वातावरण दें कि सभी का विकास साथ–साथ हो सके। इसके लिये सभी अभिभावकों को प्रत्येक बच्चे को एक समान दृष्टि से देखते हुये उनके रहन–सहन, खान–पान, खेल–कूद, पढ़ाई–लिखाई आदि समस्त क्रिया–कलापों एवं गतिविधियों में सामंजस्य स्थापित करना चाहिये। जिससे बच्चों में आपसी भाईचारे एवं सहयोग की भावना का विकास हो सके और वे समाज के विकास में अपना योगदान दे सकें।

समावेशी शिक्षा के आधारभूत ढॉचे का दूसरा सोपान प्राथमिक विद्यालयों को मानना चाहिए, जहॉ बच्चा घर से निकलकर कुछ सीखने के उद्देश्य से पहली बार पाठशाला जाता है। सामान्यतः स्कूलों में शिक्षक और शिक्षार्थी जाति, लिंग, अर्थ, सामान्य, विशिष्ट आदि के आधार पर छात्रों में वर्ग भेद करते हुये देखे जाते हैं जबकि ऐसा नहीं किया जाना चाहिये। भारत सरकार ने नियम बनाकर 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिये प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य कर तो दिया है लेकिन उसे सही अर्थों में प्राप्त करना है।

माध्यमिक विद्यालयों को समावेशी शिक्षा के अगले सोपान के रूप में देखा जा सकता है। सामान्यतः एक कक्षा में छात्र अपनी उम्र के हिसाब से रखे जाते हैं और इनमें ऊंच–नीच का भी भेदभाव नहीं किया जाता है। दिव्यांग बच्चों की मित्रता सामान्य बच्चों के साथ करवाई जाती है ताकि इनमें समूह एवं समुदाय में कार्य करने की भावना का विकास हो जिससे उनका सामूहिक विकास होगा। विद्यालय को समावेश की दिशा में ले जाने के लिये हम कुछ रणनीतियों को प्रयोग कर अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकने की कोशिश कर सकते है।

पूरी कक्षा में समावेशी अध्ययन

पूरी कक्षा में सीधे–सीधे अध्यापन परम्परागत अध्यापन की सबसे पुरानी प्रचलित विधि है। फिर भी पूरी कक्षा में अध्यापन को रोचक, चित्ताकर्षक और समावेशी बनाना सम्भव है। एक आम भारतीय विद्यालय की कक्षा में अध्यापकगण पाठ्यपुस्तकें पढ़ते जाते हैं, कभी–कभार कुछ बातें स्पष्ट कर देते हैं, या किसी एक छात्र से कहा जाता है कि पूरी कक्षा के लिये पढ़कर सुनाए। कभी–कभी अध्यापकगण पाठ्यपुस्तकों से श्यामपट पर कुछ लिखते हैं तथा छात्रों से उन्हें दर्ज करने की आशा की जाती है। ये नोट फिर पाठ्यपुस्तकों की जगह ले लेते हैं, छात्र इनको रटते हैं और परीक्षाओं में इन्हीं के आधार पर उत्तर लिखते हैं। ऐसा कक्षाध्यापन अ–निर्योग्य बच्चों तक 'समावेश' नहीं करता, विशेष आवश्यकताओं और अधिगम की कठिनाइयों ग्रस्त बच्चे मानसिक रूप से कट जाते हैं। अधिकांश प्रश्न सिर्फ तथ्यों की याद दिलाने या बच्चों से सूचनाएँ उगलवाने के लिये पूछे जाते है। जरूरी है कि कक्षा में संवाद और प्रश्नोत्तर के सत्रों के लिये एक सकारात्मक वातावरण बनाया जाए।

अलग–अलग छात्रों से विशिष्ट प्रश्नों को पूछना तथा साथ ही छात्र के अहम विश्वास के प्रति संवेदनशील रहना। यह सुनिश्चित करने का एक और ढंग है कि हर बालक सत्र में खुद को शामिल महसूस करें। इसमें सहपाठियों की रायों का सम्मान करने के लिये पूरी कक्षा का अध्यापन तथा योगदान करने वालों की ओर से बाधा या खिल्ली रोकने के लिये नियमों का प्रावधान आवश्यक हो सकता है। सवाल अगर एक बड़े

मंच पर अधिगम का हो तो आपसी विश्वास का एक माहौल बनाना जरूरी है। (मर्विन, 1998)

सामूहिक/सहकारी/सहयोगी अधिगम

निर्योग्यताओं व अधिगम की कठिनाइयों से ग्रस्त बच्चों को सामान्यतः वैयक्तिक, वन–टू–वन पाठ दिये जाते है। जहॉ वैयक्तिक अनुदेश की जरूरत पूरी तरह खत्म नहीं की जा सकती, वहीं अनुसन्धानों से साबित है कि छोटे समूहों में काम 'अधिगम के लिये लाभदायी तथा समावेशी कक्षाओं को बढ़ावा देने का एक अत्यन्त कारगर ढंग' (मर्विन 1998) होता है। अनेक प्रकार के छोटे–छोटे समूह बनाये जा सकते हैं उनमें निम्नलिखित भी शामिल हैं

सीटिंग समूह– इसमें छात्र साथ बैठते हैं पर अगल–अलग कामों में लगे होते हैं। उनमें परिणाम अलग–अलग और अक्सर काफी भिन्न होते हैं।

कामकाजी समूह– इसमें छात्र एक जैसे काम करते हैं जिनसे मिलते–जुलते परिणाम निकलते हैं। पर उनके काम परस्पर स्वतन्त्र होते हैं।

सहकारी समूह– इसमें छात्र अलग–अलग मगर परस्पर जुड़े काम करते हैं जिनसे एक संयुक्त परिणाम निकलता है।

सहयोगी समूह– इसमें छात्र एक संयुक्त परिणाम के लिये एक ही काम मिलकर करते हैं।

जांगिड़ और जांगिड़ (1995), मर्विन (1988) तथा बाल्बर्ग और पाइक (2000) सहकारी समूहों में बच्चों के काम के अनेक लाभ मानते हैं। यह बच्चों को अपने विचारों को निरूपित करने और दूसरों से बॉटने के अवसर देता है आपसी आदर को बढ़ावा देता है और आत्मसम्मान में वृद्धि करता है। यह एक लोकतांत्रिक वातावरण में भावात्मक एकीकरण की सम्भावना जगाता है।

वेस्टवुड (1993) का कथन है कि सहकारी समूह में अधिगम की व्यवस्था करते समय अध्यापकों को चाहिये कि निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखे :

- समूह के सदस्यों के ऐसे व्यवहार स्पष्ट किये जाने चाहिये जो सहकार्य को सम्भव बनाते और बढ़ावा देते हैं, जैसे दूसरों के विचारों को सुनना, आदान–प्रदान, प्रशंसा, सहायता की पेशकश
- अलग–अलग काम किस प्रकार वितरित किए जायें, इसकी योजना सावधानी से बनाई जानी चाहिये। यह भी स्पष्ट किया जाना चाहिये कि हर बच्चा किस तरह किसी और बच्चे की मदद कर सकता है।
- समूह कार्य के लिये काम इस प्रकार के हों कि वे सहयोग की मॉग करें।

सहकारी (को–आपरेटिव) और सहयोगी (कोलोबोरेटिव) समूह–कार्य में थोड़ा सा अन्तर है, पहले में छात्रों के 'अलग–अलग मगर परस्पर सम्बद्ध कार्य' होते हैं जबकि दूसरे में वे एक ही काम मिलकर करते है।' लेकिन दोनों स्थितियों में समूह एक संयुक्त परिणाम के लिये काम करता है। हार्ट (1992 अ) ने एक समूह रूप में कार्यरत बच्चों और 'सहयोगी ढंग से' काम कर रहे बच्चों के बीच एक सूक्ष्म अन्तर किया है। कहती है: 'कक्षा में सहयोग का मतलब समूह–कार्य के अलावा भी बहुत कुछ होना चाहिये।' उसका उपयोग पठन–पाठन की एक रणनीति के रूप में किया जाना चाहिये हार्ट (1992 अ)।

हमजोलियों की सीख/बालक से बालक द्वारा अधिगम

हमजोलियों से सीखना या बच्चे का बच्चे से कुछ सीखना शिक्षा–कर्म की एक और पद्धति है जो विद्यालय में समावेश प्रकिया को तेज करती है।

ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा तथा स्वास्थ्य–शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये कुछ संगठनों ने इसका उपयोग किया है। वैगनर (1982) ने हमजोलियों से सीखने के अनेक लाभ गिनवाए हैं।

1. हमजोली शिक्षक अक्सर उन बच्चों को कारगर ढंग से पढ़ाते हैं जो वयस्कों को उचित ढंग से जवाब नहीं देते।
2. हमजोली–शिक्षा शिक्षक और सहायता पाने वाले व्यक्ति के बीच दोस्ती का एक गहरा बन्धन पैदा कर सकती है, जिसका परिणाम समूह में मन्दबुद्धि बच्चों के एकीकरण के लिये बहुत महत्वपूर्ण होता है।
3. हमजोली– शिक्षा अध्यापक का बोझ कम करती है क्योंकि यह उसे एक बड़े छात्र–समूह को पढ़ाने का मौका देती है, साथ ही यह मन्दबुद्धि बच्चों को अलग से यह ध्यान भी दिलवाती है कि जिसकी उन्हें जरूरत होती है।

हमजोली–शिक्षा सहकार्य की दशाओं में साथ–साथ चलती है इससे अध्यापक के सामने एक औपचारिक, सतत ढंग से उसके आयोजन और प्रबन्ध की मजबूरी नहीं रहती।

बैगनर (1982) ने हमजोली– शिक्षा के आयोजन के लिये कुछ सुस्थापित दिशा–निर्देश भी शामिल हैं:

1. अध्यापकों को (छात्रों के बीच) ऐसा मानसिक रूझान पैदा करना चाहिए कि हम एक–दूसरे से कुछ सीख सकते हैं।
2. अभिभावकों को सम्भावित ब्योरे तैयार या स्पष्ट करने चाहिये।
3. रचनात्मक संगठन के कौशल का विकास किया जाना चाहिये।

गतिविधियों पर आधारित अधिगम

यह शब्द भारत के प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों में सबसे आम है, खासकर अगर उन्होंने किसी विशेष परियोजना या कार्यक्रम के तहत कुछ प्रशिक्षण ले रखा हो। गतिविधि का मतलब सिर्फ खेल या गति या नाटक नहीं होता और आनन्दमय का भाव खेलकूद से प्राप्त आनन्द से नहीं होना चाहिए। गतिविधि की परिभाषा है 'कोई भी ऐसी अधिगम–प्रक्रिया जिससे बच्चे अंतरंग जुड़ाव महसूस करें और प्रक्रिया नियन्त्रण से मुक्त है।'

प्रक्रिया से मानसिक जुड़ाव और उसमें भागीदारी गतिविधियों के बुनियादी तत्व होने चाहिये। हाथ और बदन हिलाने जैसी शारीरिक क्रियाएं भागीदारी का प्रदर्शन कर सकती है लेकिन अगर ऐसी भागीदारी 'गतिविधि की अन्तःवस्तु में शिक्षार्थी के मानसिक निवेश' को बढ़ावा न दे तो अर्थहीन ही होती है। गतिविधि–आधारित अधिगम के प्रति 'आधुनिक' नीतिगत वक्तव्यों से उत्पन्न ऐसी दृष्टि और ऐसी व्याख्या व्यक्ति को गांधी के बुनियादी शिक्षा के दर्शन और कार्यकलाप पर विचार के लिये मजबूर करती है जिसने अधिगम की प्रक्रिया में शरीर और मन की एकता लाने की कोशिश की। वास्तव में उन्होंने शिक्षा को पूर्ण और एक व्यक्ति को पूर्ण बनाने के लिये उसमें आत्मा के रूप में एक तीसरे तत्व का समावेश भी किया।

गतिविधि – आधारित अध्यापन में प्रमुखतम शब्द करना है। बच्चों को कुछ करना अच्छा लगता है। एक बच्चे की सहजवृत्ति को 'गतिविधि–आधारित अधिगम' की शिक्षाशास्त्रीय रणनीति में बदला जा सकता है। गतिविधियों का अर्थपूर्ण और रोचक होना तथा, जैसाकि कहा गया, उनमें सोच का तत्व शामिल होना आवश्यक है। सुनियोजित गतिविधियां एक बच्चे के 'जुड़ाव' को बढ़ावा देती है।

यथार्थ जगत की गतिविधियों या समुदाय से जुड़ी गतिविधियों का सार्थक शैक्षिक मूल्य होता है। नगरीय क्षेत्रों से समुदाय से जुड़ी गतिविधियों की कुछ मिसालों में हम स्थानीय यातायात का उपयोग, खरीदारी, बैंक में जमा–निकासी, स्थानीय पुस्तकालय का उपयोग, स्थानीय सार्वजनिक संस्थाओं के कार्यकलाप का अवलोकन, मानचित्रों से दूरियों की गणना आदि को शामिल किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसी गतिविधियों में स्थानीय जन स्वास्थ्य केन्द्र का भ्रमण, ग्रामीण निकायों के कार्यकलाप का अवलोकन, स्थानीय हाटों का भ्रमण आदि शामिल होंगे। ऐसी गतिविधियॉ बाधाओं को तोड़ती हैं ये गतिविधियॉ इस प्रकार आयोजित की जा सकती है। कि वे 'अर्थपूर्ण, प्रकार्यात्मक और बच्चे के दैनिक जीवन के लिये सार्थक हों।

अनुकरण और भूमिका–निर्वाह बच्चों को बाहर, समुदाय में ले गये बिना कक्षाओं में ही यथार्थ जीवन के तत्वों का समावेश करते हैं। परिवार चुनाव–प्रक्रिया, स्वास्थ्य–सेवाओं आदि की भूमिकाओं को निर्वाह इसकी मिसाल है। ये गतिविधियॉ संचार–संवाद की और सामाजिक कुशलताओं के विकास में सहायक होती हैं। जहॉ भूमिका निर्वाह में एक छात्र या एक छात्र समूह भागीदार हो सकता है वहीं अनुसरण को आमतौर पर विस्तारित भूमिका–निर्वाह माना जाता है जिसमें एक साथ पूरी कक्षा भाग लेती है।

शैक्षिक खेल गतिविधियों के प्रत्यक्ष के विस्थापन हैं। ये बच्चों के मन से तनाव खत्म करके उन्हें स्वाभाविक आनन्द देते हैं, पर उनका आयोजन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि पाठ्यचर्या व पाठ के उद्देश्यों से इनका सम्बन्ध हो।

आकलन में समता

भारतीय विद्यालयों में शिक्षा का पहला उद्देश्य परीक्षाओं में अंक लाना है। परीक्षाओं के प्रति एक सही दृष्टि के अभाव और पाठ्यचर्या से उनके अलगाव के कारण यह आवश्यक है कि वे न्यायसंगत हों तथा निर्योग्यता के कारण बच्चों को हानि की स्थिति में न लाए।

PWD act 1995 यह पद्वति वाले छात्रों के लिए शुद्व गणितीय प्रश्न समाप्त करने तथा उनके लिये सहायक का प्रावधान करने के उद्देश्य से परीक्षा व्यवस्था में उपयुक्त संशोधन की बात करता है। विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिये परीक्षाओं में समता के पक्षों पर ध्यान देते समय कुछ सिद्वान्त भी नजर में रहने चाहिए।

- जहॉ तक सम्भव हो, विशेष बन्दोबस्त करके निर्योयता का प्रभाव समाप्त किया जाना चाहियें।
- इन बन्दोबस्तों में अनावश्यक लाभ भी नहीं दिये जाने चाहिये।
- हर मामले में आवश्यकताओं का ठीक–ठीक निश्चय होना चाहिये।
- आकलन की एक विशेष विधि में कोई उम्मीदवार अगर भाग लेने की स्थिति में न हो तो एक वैकल्पिक कार्यपद्वति का उल्लेख किया जाना चाहिये
- विशेष प्रावधानों का सम्बन्ध प्रश्नों की सुलभता के समय और साधन से होना चाहिये।

विचार यह है कि मून्यांकन कराते समय उनकी निर्योयता उन्हें कोई हानि न पहुॅचाये।

भारत में समावेशी शिक्षा के आन्दोलन की एक विडम्बना यह है कि जहॉ विशेष शिक्षा से जुड़े लोग समावेशी शिक्षा की बात करते और इस सिलसिले में प्रशंसनीय कार्य करते आ रहे हैं वहीं सामान्य शिक्षा के अधिकांश कार्मिक इस तथ्य से परिचित भी नहीं है कि वे जो कुछ करते रहे हैं

वह मुख्य धारा की विद्यालय व्यवस्था में निर्योग्य बच्चों के समावेश के लिये एक अच्छा आधार हो सकता है। जरूरत है तो सामान्य व्यवस्था के कर्मियों तथा विशेष विद्यालय व्यवस्था में समावेश के पैरोकार के बीच एक रचनात्मक संवाद की। इन दोनों के बीच घनिष्ठ सहयोग विशेष अध्यापकों के लिये मुख्य धारा की विद्यालय व्यवस्था में कार्यरत अपने सहयोगियों से मिलकर काम करने के बारे में एक नयी भूमिका निरूपित करेगा ताकि निर्योग्य बच्चों समेत सभी बच्चों के लिये समावेशी पाठ्यचर्या और शिक्षाशास्त्र का सृजन किया जा सके।

सन्दर्भ–सूची

1. जांगिड़ और जांगिड़, पी (1995): इफेक्टिव टीचिंगः चाइल्ड सेंटर्ड एप्रोच, नयी दिल्लीः नेशनल पब्लिसिंग हाउस
2. मर्विन, सी (1998): इनडिविजुअल एण्ड होल क्लास टीचिंग,सी टिलस्टोन, एल फलोरियन और आर रोज़ (सं): प्रामोटिंग इनक्लूसिव, प्रेक्टिस, लन्दन : रूटहोज में संकलित
3. बालवर्ग एच जे और पाइक एस जे (2000) : एजुकेशनल प्रेक्टिसेज सीरीज ब्रुसेल्सः आई ए ई, जेनेवाःयूनेस्को–आई बी ई ।
4. बेस्टवुड, पी (1993): कामनसेंस मेथड्स फार चिल्ड्रेन इन स्पेशल नीड्स :स्ट्रेटेजीज फार द रेगुलर क्लासरूम,लन्दन : रूटलेज।
5. लक्ष्य व्याख्याता (स्कूल शिक्षा), पेपर–1 मनु प्रकाशन लिमिटेड, जयपुर पृ. 629
6. वैगनर, एल (1982): पियर टीचिंग : हिस्टारिकल पर्सपेक्टिब्स, लन्दनः ग्रीनबुड प्रेस
7. हार्ट, एस (1992 अ): कोलावेरेटिव क्लासरूम, टी बूथ, डब्ल्यू स्वैन, एम मेसरेटन और पी पाट्स (सं): क्यूरिक्यूला फार डाइवर्सिटी इन एजूकेशन लन्दन : रूटलेज (1992 ब): इवेल्युएटिंग सपोर्ट टीचिंग, उपर्युक्त में संकलित
8- http:// www-teachersof india-orgchiearticle
9. www.world-bank.orgeexams से रूपान्तरित

Copyright © 2017, Dr. Kalpna Yadav. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.